



INTERNATIONAL JOURNAL OF CURRENT ACADEMIC TRENDS IN MULTIDISCIPLINARY

Refereed Journal

Open Access Journal

Peer Reviewed Journal

21वीं सदी में राष्ट्र और राष्ट्रीय सुरक्षा की अवधारणा का पुनर्परिभाषिकरण एवं नए प्रतिमानों की स्थापना (Redefining the Concept of Nation and National Security in the 21st Century and Establishing New Paradigms)

Dr. Arvind Kumar

Assistant Professor, Department. of Defence & Strategic Studies ANDKPG College Gonda
Affiliated to Maa Pateswari University Balrampur, Uttar Pradesh, India

Corresponding Author: * Dr. Arvind Kumar

DOI: <https://doi.org/10.5281/zenodo.23184867>

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र समकालीन वैश्विक परिदृश्य में 'राष्ट्र' और 'राष्ट्रीय सुरक्षा' की ज्ञानमीमांसा (Epistemology) का एक आलोचनात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत करता है। सूचना क्रांति, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) के शस्त्रीकरण, और 'हथियारबंद अंतर्निर्भरता' (Weaponized Interdependence) के इस दौर में स्वयं 'राष्ट्र' की अवधारणा पारंपरिक सांस्कृतिक और भू-राजनीतिक सीमाओं से परे एक डिजिटल व वैचारिक इकाई के रूप में पुनर्गठित हो रही है, जिससे पारंपरिक वेस्टफेलियन (Westphalian) सीमा-केंद्रित सैन्य मॉडल अप्रासंगिक होते जा रहे हैं। गुणात्मक और विश्लेषणात्मक शोध पद्धति (Qualitative and Analytical Methodology) का उपयोग करते हुए, यह लेख अर्नोल्ड वोल्फर्स के 'अस्पष्ट प्रतीक' (Ambiguous Symbol) और बैरी बुजान के 'अविकसित अवधारणा' (Underdeveloped Concept) के शास्त्रीय सिद्धांतों का पुनरीक्षण करता है ताकि बदलते दौर में राष्ट्र के अस्तित्व और उसकी सुरक्षा को नए सिरे से समझा जा सके। शोध में पाया गया है कि यथार्थवादी (Realist) और आदर्शवादी (Idealist) दृष्टिकोणों के पारंपरिक द्वंद्व के कारण उत्पन्न 'सुरक्षा दुविधा' (Security Dilemma) अब भौतिक सीमाओं से आगे बढ़कर राष्ट्र की 'संज्ञानात्मक संप्रभुता' (Cognitive Sovereignty) और डेटा स्पेस तक विस्तृत हो गई है। निष्कर्षतः यह शोध पत्र एक 'त्रि-आयामी व्यापक सुरक्षा मॉडल' (3D Comprehensive Security Model) का प्रस्ताव करता है, जो नए युग के हाइब्रिड और गैर-पारंपरिक खतरों से निपटने तथा आधुनिक राष्ट्र के वजूद को सुरक्षित रखने के लिए एक बहुआयामी और लचीला ढांचा स्थापित करने में सक्षम है।

Manuscript Information

- ISSN No: 3139-9851
- Received: 21-08-2026
- Accepted: 18-09-2026
- Published: 06-10-2026
- IJCATM:1(3); 2026: 67-75
- ©2026, All Rights Reserved
- Plagiarism Checked: Yes
- Peer Review Process: Yes
- Paper type: Review Paper

How to Cite

Kumar A. 21वीं सदी में राष्ट्र और राष्ट्रीय सुरक्षा की अवधारणा का पुनर्परिभाषिकरण एवं नए प्रतिमानों की स्थापना.. Int. J. Current Acad. Trend. Multi. 2026;1(3): 67-75

Access this Article Online


www.ijcatmjournal.com

मुख्य शब्द: राष्ट्र की अवधारणा, राष्ट्रीय सुरक्षा, सुरक्षा दुविधा यथार्थवाद- अस्पष्ट प्रतीक, संज्ञानात्मक संप्रभुता

प्रस्तावना

इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक का वैश्विक परिदृश्य भू-राजनीतिक अस्थिरता, तकनीकी क्रांतियों और अभूतपूर्व हाइब्रिड खतरे (Hybrid Threats) के एक अत्यंत जटिल अंतःसंबंध का गवाह बन रहा है। ऐतिहासिक रूप से, अंतरराष्ट्रीय संबंधों का संपूर्ण ढांचा 1648 की 'वेस्टफेलियन संधि' (Treaty of Westphalia) द्वारा प्रतिपादित राज्य-केंद्रित संप्रभुता और निश्चित भौगोलिक सीमाओं के संरक्षण पर आधारित रहा है। थ्यूसिडाइडस (Thucydides) से लेकर थॉमस हॉब्स (Thomas Hobbes) तक और समकालीन दौर में Hans Morgenthau के यथार्थवादी सिद्धांतों ने हमेशा यह माना कि राष्ट्रीय सुरक्षा का प्राथमिक उद्देश्य सैन्य बल के माध्यम से राज्य की क्षेत्रीय अखंडता की रक्षा करना है। हालांकि, समकालीन वैश्वीकरण की तीव्र गति, चौथी औद्योगिक क्रांति के आगमन, और विशेषकर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) एवं क्वांटम कंप्यूटिंग के शस्त्रीकरण ने सुरक्षा के इस पारंपरिक विमर्श को पूरी तरह से उलट दिया है। वर्तमान युग में वैश्विक व्यवस्था एक नए प्रकार के 'डिजिटल शीत युद्ध' (Digital Cold War) की ओर अग्रसर है, जहाँ शक्ति का पैमाना परमाणु हथियारों के जखीरे से हटकर उन्नत एलोरिडम, सेमीकंडक्टर आपूर्ति श्रृंखलाओं और डेटा संप्रभुता की ओर स्थानांतरित हो चुका है। इसने एक ऐसे 'ग्रे-ज़ोन वॉरफेयर' (Grey-Zone Warfare) को जन्म दिया है, जो शांति और सीधे युद्ध के बीच की धुंधली रेखाओं में संचालित होता है।

इस रणनीतिक संक्रमण के दौर में सबसे गंभीर संकट सुरक्षा की पारंपरिक सीमा-केंद्रित (Border-centric) पद्धतियों की अप्रभाविता के कारण उत्पन्न हुआ है। पारंपरिक रक्षा प्रणालियों और सैन्य सिद्धांतों को मुख्य रूप से एक स्पष्ट रूप से परिभाषित दुश्मन, निश्चित युद्धक्षेत्र और भौतिक खतरों (जैसे मिसाइल, टैंक या पैदल सेना) से निपटने के लिए अभिकल्पित किया गया था। परंतु, वर्तमान समय के गैर-पारंपरिक और डिजिटल खतरे पूरी तरह से अदृश्य, सीमाविहीन और असममित (Asymmetric) हैं। उदाहरण के रूप में, किसी संप्रभु राष्ट्र के क्रिटिकल इंफ्रास्ट्रक्चर—जैसे कि राष्ट्रीय पावर ग्रिड, परमाणु संयंत्र या वित्तीय नेटवर्क—को पंगु बनाने के लिए अब किसी भौतिक आक्रमण की आवश्यकता नहीं है; एक दूरस्थ सर्वर से किया गया दुर्भावनापूर्ण रैंसमवेयर या मैलवेयर हमला पूरे देश को घुटनों पर ला सकता है। रॉबर्ट कॉपलान (Robert Kaplan) और मैरी कल्डोर (Mary Kaldor) जैसे विचारकों द्वारा प्रतिपादित 'न्यू वॉर्स' (New Wars) की अवधारणा यह स्पष्ट करती है कि आज के युद्ध केवल भौगोलिक सीमाओं पर नहीं, बल्कि समाज के भीतर सूचनात्मक और संज्ञानात्मक स्तरों पर लड़े जा रहे हैं। जब साइबर स्पेस के माध्यम से किसी राष्ट्र के लोकतांत्रिक विमर्श, चुनाव प्रणालियों और जनभावनाओं को डीपफेक या एल्गोरिद्मिक हेरफेर के द्वारा दूषित किया जाता है, तो वहाँ पारंपरिक सीमा सुरक्षा बल मूकदर्शक बन जाते हैं। यही इस युग की सबसे बड़ी सुरक्षा विसंगति है कि भौतिक सीमाएं पूरी तरह सुरक्षित होने के बावजूद राष्ट्र आंतरिक और तकनीकी रूप से असुरक्षित होते जा रहे हैं।

इस जटिल पृष्ठभूमि में, प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय सुरक्षा के शास्त्रीय ज्ञानमीमांसीय (Epistemological) सिद्धांतों का पुनर्मूल्यांकन करना और एक ऐसे समकालीन प्रतिमान को स्थापित करना है जो इन नए युग के खतरों की व्याख्या कर सके। यह शोध

इस बात का अन्वेषण करता है कि कैसे पारंपरिक यथार्थवादी और आदर्शवादी दृष्टिकोण वर्तमान डिजिटल अराजकता को समझने में अपूर्ण हैं। इस पत्र का मुख्य उद्देश्य अर्नोल्ड वोल्फर्स (Arnold Wolfers) और बैरी बुज़ान (Barry Buzan) के शास्त्रीय दार्शनिक ढांचों का विस्तार करते हुए एक 'त्रि-आयामी व्यापक सुरक्षा मॉडल' (3D Comprehensive Security Model) का प्रस्ताव करना है। इस शोध का अकादमिक और व्यावहारिक महत्व इस तथ्य में निहित है कि यह नीति-निर्माताओं और अंतरराष्ट्रीय रणनीतिकारों को केवल सैन्य-केंद्रित प्रतिक्रियाओं से परे जाकर 'हथियारबंद अंतर्निर्भरता' (Weaponized Interdependence) और 'संज्ञानात्मक संप्रभुता' (Cognitive Sovereignty) जैसे आधुनिक उपकरणों को समझने के लिए एक व्यवस्थित, बौद्धिक और बहुआयामी रूपरेखा प्रदान करता है, ताकि बदलते वैश्विक परिदृश्य में राष्ट्र की संप्रभुता को अक्षुण्ण रखा जा सके।

राष्ट्र की अवधारणा: (Concept of Nation)

अंतराष्ट्रीय संबंधों, सैन्य विज्ञान और राजनीतिक समाजशास्त्र के अकादमिक विमर्श में 'राष्ट्र' (Nation) की अवधारणा कोई स्थिर, प्राकृतिक या जैविक वास्तविकता नहीं है, बल्कि यह एक निरंतर गतिशील, ऐतिहासिक रूप से निर्मित और सुरक्षात्मक आवश्यकताओं के अनुरूप ढलने वाली राजनीतिक घटना रही है। रणनीतिक इतिहास के गहन विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्र की वैचारिक पहचान और राज्य की सैन्य मारक क्षमता के बीच एक अटूट द्वंद्वतात्मक संबंध रहा है। जब हम ऐतिहासिक रूप से इस यात्रा का अवलोकन करते हैं, तो आधुनिक काल की शुरुआत यानी 1648 की वेस्टफेलिया की संधि से लेकर 21वीं सदी के उत्तर-आधुनिक युग तक, राष्ट्र की परिभाषा ने अपनी सीमाओं, वैधता के स्रोतों और सुरक्षात्मक रणनीतियों को पूरी तरह बदला है।

राष्ट्र को सैद्धांतिक रूप से समझने के लिए इसकी मुख्य अकादमिक परिभाषाओं पर विचार करना आवश्यक है। राजनीतिक विचारक एर्नेस्ट रेनन (Ernest Renan) ने अपने प्रसिद्ध व्याख्यान "राष्ट्र क्या है?" (What is a Nation?) में राष्ट्र को एक "दैनिक जनमत संग्रह" (A Daily Plebiscite) और एक "आत्मिक सिद्धांत" (Spiritual Principle) माना है, जो साझा अतीत के गौरव और भविष्य में साथ मिलकर बड़े काम करने की इच्छा पर टिका होता है। दूसरी ओर, आधुनिकतावादी दार्शनिक बनेडिक्ट एंडरसन (Benedict Anderson) ने राष्ट्र को एक "कल्पित राजनीतिक समुदाय" (An Imagined Political Community) के रूप में परिभाषित किया है। यह कल्पित इसलिए है क्योंकि एक राष्ट्र के लाखों सदस्य कभी एक-दूसरे को देख या जान नहीं पाते, फिर भी उनके मस्तिष्कों में एक साझा संप्रभु एकता और बंधुत्व की छवि जीवित रहती है। सैन्य इतिहासकार और समाजशास्त्री एंथनी डी. स्मिथ (Anthony D. Smith) के अनुसार, राष्ट्र मानव जनसंख्या का एक ऐसा समूह है जो एक ऐतिहासिक भू-भाग, साझा मिथकों, ऐतिहासिक स्मृतियों, एक जन-संस्कृति और सभी सदस्यों के लिए समान कानूनी अधिकारों व कर्तव्यों को साझा करता है।

सैन्य विज्ञान और राष्ट्रीय सुरक्षा के परिप्रेक्ष्य में किसी भी जन-समूह को एक सुदृढ़ 'राष्ट्र' के रूप में स्थापित होने के लिए **पाँच आवश्यक**

तत्वों (Essential Elements) की पूर्ति करनी होती है, जो राष्ट्रीय रक्षा की रीढ़ बनते हैं:

- **साझा ऐतिहासिक चेतना और स्मृतियाँ (Shared Historical Consciousness):**

राष्ट्र के निर्माण के लिए एक साझा अतीत, साझा नायक और ऐतिहासिक संघर्षों (विशेषकर बाह्य आक्रमणों के खिलाफ लड़े गए युद्धों) की स्मृतियाँ अत्यंत आवश्यक हैं। यह तत्व सैन्य मनोविज्ञान में सैनिकों के भीतर 'एस्पिरिट डी कॉर्प्स' (सैन्य दल की भावना) को जन्म देता है।

- **सांस्कृतिक व भाषाई सामंजस्य (Cultural and Linguistic Cohesion):**

यद्यपि आधुनिक राष्ट्र बहु-सांस्कृतिक हो सकते हैं, लेकिन उनके भीतर एक साझा संचार माध्यम या जन-सांस्कृतिक होना आवश्यक है जो विभिन्न समूहों को आपस में जोड़ता है।

- **निश्चित मनोवैज्ञानिक भू-भाग (Psychological Attachment to Territory):**

राष्ट्र के लिए भूमि केवल एक भौगोलिक टुकड़ा नहीं होती, बल्कि वह 'पितृभूमि' (Fatherland) या 'मातृभूमि' (Motherland) के रूप में एक पवित्र भावनात्मक प्रतीक होती है, जिसके लिए नागरिक अपना सर्वोच्च बलिदान देने को तत्पर रहते हैं।

- **राजनीतिक आत्मनिर्णय की आकांक्षा (Will for Political Self-Determination):**

एक राष्ट्र केवल सांस्कृतिक समूह नहीं है; उसमें अपनी नियति का निर्धारण स्वयं करने और एक संप्रभु राजनीतिक इकाई (राज्य) के रूप में संगठित होने की तीव्र इच्छाशक्ति होनी चाहिए।

- **समान नागरिक अधिकार और कर्तव्य (Common Legal Rights and Obligations):**

आधुनिक राष्ट्रों में नागरिकों के बीच कानूनन समानता और राज्य के प्रति साझा दायित्व (जैसे राष्ट्रीय संकट के समय सैन्य सेवा के लिए लामबंदी) का भाव होना अनिवार्य है।

ऐतिहासिक विकासक्रम की ओर देखें तो 1648 में हस्ताक्षरित वेस्टफेलिया की संधि आधुनिक अंतर्राष्ट्रीय समाज की उत्पत्ति की कथा मानी जाती है। इस संधि ने मध्यकालीन यूरोप के उस बहुस्तरीय, अराजक और धार्मिक पदानुक्रम को विस्थापित कर दिया, जिसमें चर्च और पवित्र रोमन साम्राज्य का वर्चस्व था। वेस्टफेलिया ने एक नई राजनीतिक व्यवस्था को जन्म दिया, जिसे 'क्षेत्रीय संप्रभु राज्य' कहा गया। इस मॉडल के तहत संप्रभुता का निर्धारण किसी अमूर्त सांस्कृतिक पहचान या जन-समूह की भावना से नहीं होता था, बल्कि वह राजा की निश्चित भौगोलिक सीमाओं और प्रशासनिक नियंत्रण पर टिकी थी। इस युग में युद्ध पूर्णतः शासकों के निजी और वंशवादी विषय थे। इन युद्धों को लड़ने के लिए पेशेवर या भाड़े के सैनिकों का उपयोग किया जाता था, जो केवल आर्थिक लाभ के लिए लड़ते थे। आम जनता, जिसे राष्ट्र की प्रजा कहा जाता था, इन युद्धों के प्रति पूरी तरह उदासीन रहती थी क्योंकि संप्रभुता का बदलना केवल एक राजा

से दूसरे राजा के हाथ में सत्ता का स्थानांतरण मात्र था। इस दौर में 'राष्ट्र' की कोई एकीकृत मनोवैज्ञानिक अवधारणा अस्तित्व में नहीं थी। इस संकुचित और शासक-केंद्रित भू-राजनीतिक प्रतिमान को 1789 की फ्रांसीसी क्रांति ने समूल नष्ट कर दिया। फ्रांसीसी क्रांति ने वैश्विक इतिहास में पहली बार संप्रभुता के स्रोत को राजा के दैवीय अधिकार से छीनकर 'लोकप्रिय संप्रभुता' यानी नागरिकों के अमूर्त समूह 'राष्ट्र' में स्थापित किया। क्रांति ने घोषणा की कि राज्य का वास्तविक स्वामी राजा नहीं, बल्कि उसकी जनता है। जब क्रांतिकारी फ्रांस को कुचलने के लिए यूरोप की पारंपरिक राजशाहियों ने गठबंधन बनाया, तब फ्रांस पर अस्तित्व का संकट मंडराने लगा। इस असाधारण चुनौती का सामना करने के लिए अगस्त 1793 में नेशनल कन्वेंशन ने 'लेवी एन मास' (सामूहिक अनिवार्य सैन्य लामबंदी) की ऐतिहासिक घोषणा की। इस घोषणा ने सैन्य विज्ञान के इतिहास को हमेशा के लिए बदल दिया। इसके तहत यह सिद्धांत स्थापित हुआ कि अब से प्रत्येक नागरिक मूलतः एक सैनिक है और प्रत्येक सैनिक एक नागरिक है। भाड़े के सैनिकों का स्थान वैचारिक रूप से प्रेरित 'नागरिक-सैनिक' ने ले लिया। अब सैनिक किसी वेतन या राजा के भय के लिए नहीं, बल्कि अपनी 'पितृभूमि' और अपनी चुनी हुई राष्ट्रीय पहचान की रक्षा के लिए लड़ने लगा। इस भावनात्मक और वैचारिक लामबंदी ने नेपोलियन बोनापार्ट को एक ऐसी असीमित जनशक्ति वाली सेना प्रदान की, जिसने पूरे यूरोप के सैन्य संतुलन को हिलाकर रख दिया। फ्रांसीसी क्रांति ने यह साबित कर दिया कि राष्ट्र की सामूहिक चेतना रक्षा तंत्र की सबसे बड़ी सॉफ्ट-पावर हो सकती है।

19वीं सदी के उत्तरार्ध में जब इस राष्ट्रवादी भावना का औद्योगिक क्रांति और आधुनिक पूंजीवाद के साथ संश्लेषण हुआ, तो राष्ट्र-राज्य की अवधारणा का तीव्र सैन्यीकरण शुरू हुआ। कार्ल वॉन क्लॉज़ेविट्स ने अपनी कालजयी कृति 'ऑन वॉर' में जिस 'पूर्ण युद्ध' की सैद्धांतिक कल्पना की थी, वह 20वीं सदी के प्रथम और द्वितीय विश्व युद्ध में 'टोटल वॉर' (पूर्ण युद्ध) के रूप में यथार्थ बनकर सामने आई। टोटल वॉर का तात्पर्य एक ऐसे युद्ध से था जिसमें अग्रिम मोर्चे पर तैनात सेना और पीछे रह गए नागरिक समाज के बीच का अंतर पूरी तरह समाप्त हो गया। युद्ध अब केवल सीमाओं पर हथियारों की लड़ाई नहीं रह गया था, बल्कि पूरे राष्ट्र की आर्थिक, वैज्ञानिक, औद्योगिक और सामाजिक क्षमता को एक सामूहिक सैन्य मशीनरी में झोंक दिया गया। कारखाने हथियारों का उत्पादन करने लगे, नागरिक श्रम को सैन्य रसद के अधीन कर दिया गया और वैज्ञानिक प्रयोगशालाएं विनाशकारी हथियारों के अनुसंधान में लग गईं। राज्य ने जनसंचार माध्यमों, शिक्षा और राष्ट्रवादी प्रचार (Propaganda) का उपयोग करके नागरिकों के मस्तिष्क का इस कदर राष्ट्रीयकरण कर दिया कि वे राज्य के आदेश पर सामूहिक विनाश का हिस्सा बनने और सर्वोच्च बलिदान देने को तैयार हो गए।

इसी कालखंड ने रणनीतिक विमर्श में व्यापक राष्ट्रीय शक्ति (Comprehensive National Power) की अवधारणा को जन्म दिया। सैन्य विचारकों ने महसूस किया कि आधुनिक युग में सुरक्षा केवल अग्रिम पंक्ति के सैनिकों की संख्या पर निर्भर नहीं करती, बल्कि वह राष्ट्र के आंतरिक सामाजिक सामंजस्य और मनोवैज्ञानिक सहनशक्ति पर टिकी होती है। यदि कोई राष्ट्र आंतरिक रूप से नृवंशीय, भाषाई या सामाजिक रूप से खंडित है (अर्थात् ऊपर वर्णित आवश्यक तत्वों में बिखराव है), तो वह आधुनिक युद्ध की भीषण आर्थिक and

मानसिक मार को सहन नहीं कर पाएगा और ताश के पत्तों की तरह बिखर जाएगा। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान सोवियत संघ द्वारा नाजी जर्मनी के खिलाफ दिखाई गई अभूतपूर्व रणनीतिक दृढ़ता इसका ऐतिहासिक प्रमाण है, जहाँ साझा सोवियत राष्ट्रीय पहचान और 'महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध' के मिथक ने पूरे समाज को एक सूत्र में बांधकर रखा और देश को टूटने से बचा लिया।

1991 में सोवियत संघ के विघटन और शीतयुद्ध के अवसान के बाद अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में संयुक्त राज्य अमेरिका के नेतृत्व में वैश्विक एकध्रुवीयता का दौर शुरू हुआ। वैश्वीकरण, मुक्त बाज़ार और सूचना प्रौद्योगिकी के तीव्र प्रवाह ने राष्ट्र-राज्य की उस पारंपरिक वेस्टफेलियन संप्रभुता पर प्रहार किया जिसे सदियों से अभेद्य माना जाता था। शीतयुद्धोत्तर काल में 'मानवीय हस्तक्षेप' और 'रक्षक का उत्तरदायित्व' (R2P Responsibility to Protect) जैसे नए अंतर्राष्ट्रीय सिद्धांतों ने स्थापित किया कि यदि कोई राष्ट्र-राज्य अपने आंतरिक नागरिकों की सुरक्षा करने में विफल रहता है या मानवाधिकारों का उल्लंघन करता है, तो अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को उसकी संप्रभु सीमाओं का उल्लंघन करने का नैतिक और कानूनी अधिकार मिल जाता है, जैसा कि बाल्कन और लीबिया के संकटों में देखा गया। इसके समानांतर, इंटरनेट और डिजिटल नेटवर्क के प्रसार ने राष्ट्र की पारंपरिक सुरक्षा सीमाओं को पूरी तरह अमूर्त और पारगम्य बना दिया है।

21वीं सदी के समकालीन रणनीतिक परिदृश्य में राष्ट्रों को खतरा केवल सीमाओं पर तैनात टैंकों और मिसाइलों से नहीं है, बल्कि सीमाओं के पार से आने वाले डेटा, साइबर हमलों, वित्तीय हेरफेर और संज्ञानात्मक युद्ध (Cognitive Warfare) से है। हाइब्रिड वॉरफेयर के इस युग में गैर-राज्य अभिकर्ता (जैसे अंतर्राष्ट्रीय आतंकवादी नेटवर्क और साइबर सिंडिकेट) पारंपरिक सैन्य तंत्र को धता बताते हुए सीधे राष्ट्रों की आंतरिक सुरक्षा और सामाजिक ताने-बाने को निशाना बना रहे हैं। शत्रु ताकतें अब भौतिक आक्रमण के बजाय लक्षित देश की जनता के मन में उनकी राष्ट्रीय पहचान, इतिहास और राज्य की संस्थाओं के प्रति अविश्वास पैदा करके 'संज्ञानात्मक विखंडन' पैदा करती हैं।

रणनीतिक योजनाकारों के लिए सुरक्षा चुनौतियों का यह स्वरूप इस बात पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार के आधुनिक राष्ट्र-राज्य का प्रतिनिधित्व करता है।

वैश्विक पटल पर मुख्य रूप से चार प्रकार के राष्ट्र-राज्य विद्यमान हैं।

पहला, नागरिक राष्ट्र-राज्य (Civic Nation-State), जहाँ राष्ट्रियता का आधार कोई साझा नस्ल या धर्म नहीं, बल्कि संवैधानिक मूल्य और कानून का शासन होता है। इन राज्यों की सैन्य ताकत उनकी संस्थागत सुदृढ़ता होती है, किंतु वे वैचारिक ध्रुवीकरण और सूचनात्मक युद्ध के प्रति संवेदनशील होते हैं

दूसरा, नृवंश-राष्ट्र-राज्य (Ethnic Nation-State), जहाँ नागरिकता साझा रक्त-संबंध, भाषा या विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान से तय होती है। ये राज्य बाह्य आक्रमण के समय अभूतपूर्व रणनीतिक सहनशक्ति दिखाते हैं, लेकिन इनके भीतर अल्पसंख्यक नृवंशीय फॉल्ट-लाइनें आंतरिक सुरक्षा के लिए गंभीर जोखिम पैदा करती हैं।

तीसरा, उत्तर-आधुनिक राष्ट्र-राज्य (Post-Modern Nation-State), जो बहुपक्षीय गठबंधनों (जैसे नाटो) पर निर्भर हैं और आर्थिक व तकनीकी सॉफ्ट पावर पर बल देते हैं, परंतु दीर्घकालिक पारंपरिक युद्ध के लिए अपनी जनता को मानसिक रूप से लामबंद करने में कमजोर होते हैं।

चौथा, कमजोर या विफल राष्ट्र-राज्य (Weak or Failed Nation-State), जहाँ केंद्रीय सत्ता बिखर चुकी होती है और कबीलाई या उग्रवादी गुट हावी होते हैं। ये राज्य एक अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा निर्वात पैदा करते हैं जो हाइब्रिड खतरों का केंद्र बन जाता है।

समकालीन सैन्य विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में, राष्ट्र के इन आवश्यक तत्वों, आंतरिक प्रकारों और सांस्कृतिक सामंजस्य का सीधा प्रभाव सैन्य रणनीतिकार जॉन बॉयड (John Boyd) के प्रसिद्ध **OODA लूप (Observe, Orient, Decide, Act)** पर पड़ता है। हाइब्रिड और संज्ञानात्मक युद्ध के इस दौर में, यदि किसी राष्ट्र के भीतर साझा ऐतिहासिक चेतना और वैचारिक एकता कमजोर होती है, तो शत्रु देश समाज में भ्रामक सूचनाओं (**Disinformation**) के माध्यम से उस राष्ट्र के 'ओरिएंटेशन' (**Orient**) यानी सोचने और समझने की क्षमता को पंगु बना देता है। नतीजतन, राज्य का सुरक्षा तंत्र सही समय पर सही निर्णय लेने में विफल हो जाता है। यही कारण है कि वैश्विक रक्षा थिंक-टैंक जैसे **रैंड कॉर्पोरेशन (RAND Corporation)** अब अपनी रणनीतिक रिपोर्टों में पारंपरिक हथियारों से अधिक '**संज्ञानात्मक प्रतिरोध (Cognitive Resilience)**' पर बल दे रहे हैं। अंततः, 21वीं सदी में किसी राष्ट्र की वास्तविक सुरक्षा सीमाओं पर तैनात मिसाइलों से नहीं, बल्कि उसकी जनता के भीतर समाहित 'राष्ट्र' की अमूर्त वैचारिक और मनोवैज्ञानिक सुदृढ़ता से मापी जाती है।

राष्ट्रीय सुरक्षा के सैद्धांतिक प्रतिमान : (Theoretical Paradigms of National Security)

1. राष्ट्रीय सुरक्षा की पारंपरिक धारणा: (Traditional Concept of National Security)

राष्ट्रीय सुरक्षा के विमर्श का ऐतिहासिक ढांचा अनिवार्य रूप से राज्य-केंद्रित (State-centric) और सैन्य-केंद्रित दृष्टिकोण के इर्द-गिर्द बुना गया है। इस पारंपरिक प्रतिमान के अनुसार, संप्रभु राज्य ही अंतरराष्ट्रीय राजनीति का प्राथमिक अभिनेता (Primary Actor) है, जिसकी क्षेत्रीय अखंडता और अस्तित्व की रक्षा करना शासनकला (Statecraft) का सर्वोच्च धर्म माना गया है। 1648 की वेस्टफेलियन संधि (Treaty of Westphalia) ने इस विचार को कानूनी जामा पहनाया, जिसने संप्रभु राज्यों की भौगोलिक सीमाओं की अनुल्लंघनीयता को स्थापित किया।

इस पारंपरिक प्रतिमान के विकास में प्राचीन भारतीय रणनीतिकार कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' और प्रशियाई सैन्य चिंतक कार्ल वॉन क्लॉज़विट्ज़ की कृति 'ऑन वॉर' (On War) का योगदान तो सर्वविदित है ही, परंतु इसके दार्शनिक आधार को यूरोपीय पुनर्जागरण (Renaissance) के दौरान निकोलो मैकियावेली (Niccolo Machiavelli) ने एक नया यथार्थवादी और व्यावहारिक मोड़ दिया था। इटली के पुनर्जागरण काल की राजनीतिक अस्थिरता और विदेशी आक्रमणों के प्रत्यक्ष अनुभव से प्रेरित होकर मैकियावेली ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'द प्रिंस' (The Prince) में यह विस्तार से प्रतिपादित किया कि एक राजा या शासक को अपनी सत्ता और राज्य की रक्षा के

लिए क्या करना चाहिए। मैकियावेली का स्पष्ट मानना था कि एक शासक को नैतिक बंधनों से मुक्त होकर केवल राज्य के अस्तित्व (Raison d'État) को प्राथमिकता देनी चाहिए। उन्होंने तर्क दिया कि राजा को एक साथ शेर की तरह बहादुर और लोमड़ी की तरह चालाक होना चाहिए। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि मैकियावेली ने 'सैनिक सत्ता' पर अत्यधिक जोर दिया; उनका मानना था कि भाड़े के सैनिकों (Mercenaries) के भरोसे कोई भी राष्ट्र सुरक्षित नहीं रह सकता, इसलिए एक सुदृढ़ राष्ट्रीय नागरिक सेना ही राज्य की सुरक्षा की वास्तविक रीढ़ होती है। शासक का प्राथमिक कर्तव्य निरंतर युद्ध की कला का अभ्यास करना और अपनी सैन्य शक्ति को संगठित रखना है।

इस पारंपरिक सैन्य-केंद्रित विमर्श को बाद में ब्रिटिश इतिहासकार और विचारक मार्टिन वाइट (Martin Wight) ने अपनी कृतियों में 'तार्किकतावादी' (Rationalist) और 'यथार्थवादी' परंपराओं के वर्गीकरण के माध्यम से आगे बढ़ाया। वाइट ने स्पष्ट किया कि अंतरराष्ट्रीय समाज में संप्रभु राज्यों का अस्तित्व उनकी आंतरिक और बाहरी सैन्य शक्ति की संतुलन क्षमता पर ही निर्भर करता है। क्लॉज़विट्ज़ ने भी इस धारणा की पुष्टि करते हुए अपना प्रसिद्ध सिद्धांत प्रतिपादित किया कि "युद्ध अन्य साधनों के माध्यम से राजनीति की निरंतरता मात्र है" (War is the continuation of politics by other means)। इस प्रकार, पारंपरिक प्रतिमान सुरक्षा को पूरी तरह से सैन्य बल के एक अपरिहार्य समीकरण के रूप में प्रस्तुत करता है।

2. राष्ट्रीय सुरक्षा की यथार्थवादी धारणा: (Realist Concept of National Security)

बीसवीं सदी के मध्य में, विशेष रूप से 1930 से 1970 के दशकों के दौरान, अंतरराष्ट्रीय संबंधों और सुरक्षा अध्ययनों में एक व्यापक रणनीतिक संक्रमण देखा गया। दो विश्व युद्धों के विनाश और शीत युद्ध की शुरुआत ने सुरक्षा को एक सुव्यवस्थित दार्शनिक प्रतिमान में ढालने के लिए यथार्थवादी (Realist) संप्रदाय को प्रेरित किया। इस संक्रमण काल में वाल्टर लिपमैन (Walter Lippmann) ने 1943 में प्रकाशित अपनी ऐतिहासिक पुस्तक '*U.S. Foreign Policy: Shield of the Republic*' में राष्ट्रीय सुरक्षा की एक कालजयी और व्यावहारिक परिभाषा प्रस्तुत की। लिपमैन ने तर्क दिया कि "एक राष्ट्र तब सुरक्षित होता है जब उसे युद्ध से बचने के लिए अपने वैध हितों की बलि देने के लिए मजबूर न होना पड़े, और यदि चुनौती दी जाए, तो वह युद्ध के माध्यम से उन हितों को बनाए रखने में सक्षम हो।" लिपमैन की यह परिभाषा सुरक्षा को केवल सैन्य शक्ति नहीं, बल्कि राष्ट्रीय हितों और विदेश नीति के संतुलन के रूप में स्थापित करती है।

इस यथार्थवादी विमर्श को बौद्धिक धार देने में ई.एच. कार (E.H. Carr) की 1939 की प्रसिद्ध पुस्तक '*द ट्वेंटी इयर्स क्राइसिस*' (The Twenty Years' Crisis) ने मील के पथर की भूमिका निभाई, जिसमें उन्होंने प्रथम विश्व युद्ध के बाद के आदर्शवाद की कड़ी आलोचना की और यह प्रतिपादित किया कि अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था अनिवार्य रूप से हितों के टकराव और शक्ति के खेल पर आधारित होती है। इसके बाद हंस जे. मॉर्गेन्थौ (Hans J. Morgenthau) ने अपने युगांतकारी ग्रंथ '*Politics Among Nations: The Struggle for Power and Peace*' में यथार्थवाद को छह मौलिक सिद्धांतों में पिरोकर एक संपूर्ण सैद्धांतिक

स्तंभ बना दिया। मॉर्गेन्थौ का यथार्थवाद इस मूल धारणा पर टिका है कि अंतरराष्ट्रीय राजनीति का स्वरूप अनिवार्य रूप से अराजकतावादी (Anarchic) है, जहाँ राज्यों के ऊपर कोई केंद्रीय वैश्विक सरकार या संप्रभु नियामक संस्था मौजूद नहीं है। इस अराजकतापूर्ण वातावरण में, 'आत्म-सहायता' (Self-help) ही प्रत्येक राज्य का एकमात्र विकल्प है, और राष्ट्रीय हित को केवल 'शक्ति' (Power) के रूप में ही परिभाषित किया जा सकता है।

इसी दौर में, अमेरिकी राजनयिक और रणनीतिकार जॉर्ज केनान (George F. Kennan) ने अपने प्रसिद्ध 'लॉन्ग टेलीग्राम' (Long Telegram) और विदेश नीति के सिद्धांतों के माध्यम से शीत युद्ध के दौरान सोवियत संघ के खिलाफ 'नियंत्रण की नीति' (Policy of Containment) को जन्म दिया, जिसने यह दिखाया कि व्यावहारिक धरातल पर राष्ट्रीय सुरक्षा कैसे सुनिश्चित की जाती है। इसके साथ ही, किंसी राइट (Quincy Wright) ने अपनी व्यापक शोध कृति '*ए स्टडी ऑफ वॉर*' (A Study of War, 1942) में युद्ध के कारणों और अंतरराष्ट्रीय संबंधों के उतार-चढ़ाव का एक गहन सांख्यिकीय और विश्लेषणात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत किया। राइट ने यह सिद्ध किया कि सुरक्षा केवल हथियारों के एकतरफा संचय से नहीं, बल्कि अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था में शक्ति संतुलन (Balance of Power) को बनाए रखने और राज्यों के बीच राजनीतिक, आर्थिक तथा सैन्य संबंधों के सूक्ष्म संतुलन से ही संभव है। 1930 से 1970 के इन दशकों ने यह पूरी तरह स्थापित कर दिया कि वैश्विक अराजकता के बीच सुरक्षा की खोज कभी न समाप्त होने वाले एक शक्ति संघर्ष की यात्रा है।

3. राष्ट्रीय सुरक्षा की आदर्शवादी/उदारवादी धारणा: (Idealistic Concept of national Security)

यथार्थवादियों के शक्ति-केंद्रित और अनिवार्य संघर्षवादी दृष्टिकोण के पूर्ण विपरीत, आदर्शवादी और उदारवादी (Idealist/Liberal) संप्रदाय ने राष्ट्रीय सुरक्षा की एक अधिक सहयोगात्मक, मानवीय और संस्थागत व्याख्या प्रस्तुत की है। इस वैचारिक परंपरा की ऐतिहासिक जड़ें प्रबुद्धता युग (Enlightenment Era) के फ्रांसीसी विचारक मार्किस डी कोंडोर्सेट (Marquis de Condorcet) के दार्शनिक ग्रंथों में मिलती हैं। कोंडोर्सेट ने मानव बुद्धि की निरंतर प्रगति और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रों के बीच समानता एवं शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की वकालत की थी। उनका मानना था कि जैसे-जैसे समाज प्रबुद्ध होगा, युद्ध की तार्किकता समाप्त हो जाएगी और राष्ट्र आपसी समझ से सुरक्षा की स्थापना कर सकेंगे।

20वीं सदी में इस आदर्शवादी विमर्श को व्यावहारिक धरातल पर लाने का सबसे पहला बड़ा प्रयास अमेरिकी राष्ट्रपति वुड्रो विल्सन (Woodrow Wilson) ने अपने प्रसिद्ध 'चौदह सूत्री कार्यक्रम' (Fourteen Points) के माध्यम से किया, जिसने प्रथम विश्व युद्ध के बाद 'लीग ऑफ नेशंस' की स्थापना की नींव रखी। विल्सन का यह मॉडल 'सामूहिक सुरक्षा' (Collective Security) के सिद्धांत पर आधारित था, जो यह मानता है कि "किसी एक राज्य के खिलाफ किया गया आक्रमण सभी राज्यों के खिलाफ आक्रमण माना जाएगा," और इसका मुकाबला पूरा अंतरराष्ट्रीय समुदाय मिलकर करेगा।

इस उदारवादी और शांतिवादी विमर्श को केवल संस्थागत ही नहीं, बल्कि एक उच्च नैतिक और दार्शनिक ऊंचाई प्रदान करने वाले विचारकों में महात्मा गांधी (Mahatma Gandhi), बर्टेंड रसेल

(Bertrand Russell) और नेल्सन मंडेला (Nelson Mandela) अग्रणी हैं। महात्मा गांधी ने राष्ट्रीय और वैश्विक सुरक्षा को एक सर्वथा नवीन दृष्टिकोण दिया, जिसे 'अहिंसक सुरक्षा' या 'सत्याग्रह' के रूप में समझा जा सकता है। गांधी जी का दर्शन यह प्रतिपादित करता है कि वास्तविक सुरक्षा हिंसा, सैन्य दमन या परमाणु हथियारों के संचय से कभी हासिल नहीं की जा सकती; क्योंकि हिंसा प्रति-हिंसा को जन्म देती है। सच्ची सुरक्षा नैतिक शक्ति, न्यायपूर्ण समाज की स्थापना और पारस्परिक करुणा पर आधारित होती है। इसी प्रकार, महान ब्रिटिश दार्शनिक और गणितज्ञ बर्टेंड रसेल ने परमाणु हथियारों की होड़ के खिलाफ और वैश्विक निरस्त्रीकरण (Disarmament) के लिए जीवन पर्यंत संघर्ष किया। रसेल का तर्क था कि आधुनिक युग में युद्ध मानवता के पूर्ण विनाश का कारण बन सकता है, इसलिए सुरक्षा की खोज हथियारों की संख्या बढ़ाने में नहीं, बल्कि बुद्धिवादी शांतिवाद (Rational Pacifism) और वैश्विक सहयोग में है। आधुनिक काल में नेल्सन मंडेला ने दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के खिलाफ अपने लंबे संघर्ष और सुलह (Reconciliation) की नीति के माध्यम से यह सिद्ध किया कि वास्तविक राष्ट्रीय सुरक्षा आंतरिक सामाजिक समरसता, मानवाधिकारों के संरक्षण और समावेशी न्याय के बिना अधूरी है।

समकालीन दौर में इस उदारवादी सुरक्षा विमर्श को रॉबर्ट क्योहेन (Robert Keohane) ने अपनी पुस्तक '*After Hegemony*' में आर्थिक अंतर्निर्भरता (Interdependence) के सिद्धांतों से जोड़ा, और जोसेफ न्ये (Joseph Nye) ने अपनी प्रसिद्ध कृति '*The Future of Power*' में पारंपरिक सुरक्षा की सैन्य धारणा को बदलते हुए 'सॉफ्ट पावर' (Soft Power) की अवधारणा पेश की। न्ये और क्योहेन का संयुक्त विमर्श यह स्पष्ट करता है कि आधुनिक युग में राष्ट्रीय सुरक्षा केवल सैन्य बल (Hard Power) से तय नहीं होती, बल्कि अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं, लोकतांत्रिक मूल्यों, सांस्कृतिक आकर्षण और आर्थिक जुड़ाव के एक व्यापक ताने-बाने से सुनिश्चित होती है।

शास्त्रीय सुरक्षा बहस और द्वंद्व (Classical Security Debates):

1. सुरक्षा दुविधा की धारणा (The Concept of Security Dilemma)

अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अराजकतावादी चरित्र से उत्पन्न होने वाला सबसे बुनियादी और विनाशकारी विरोधाभास 'सुरक्षा दुविधा' (Security Dilemma) है। इस अवधारणा का मूल प्रतिपादन वर्ष 1950 में जॉन एच. हर्ज़ (John H. Herz) ने अपने एक युगांतकारी शोध पत्र में किया था। हर्ज़ के अनुसार, एक ऐसी दुनिया में जहाँ कोई केंद्रीय वैश्विक सत्ता (Sovereign Authority) नहीं है, प्रत्येक राज्य निरंतर भय और असुरक्षा की स्थिति में जीता है। अपनी रक्षा और अस्तित्व को सुनिश्चित करने के लिए, जब कोई एक देश अपनी सैन्य क्षमता बढ़ाता है, नए हथियार खरीदता है या अपनी सीमाओं को मजबूत करता है, तो उसके इस कदम को उसके पड़ोसी या प्रतिस्पर्धी राष्ट्र अनिवार्य रूप से एक संभावित खतरे के रूप में देखते हैं। परिणामस्वरूप, दूसरा देश भी अपनी असुरक्षा को कम करने के लिए जवाबी सैन्य संचय शुरू कर देता है। इस प्रक्रिया का अंततः परिणाम यह होता है कि दोनों ही राष्ट्र हथियारों की एक अंतहीन और आत्मघाती होड़ में फँस जाते हैं, और दोनों ही प्रारंभ की तुलना में स्वयं को कहीं अधिक असुरक्षित और जोखिम भरी स्थिति में पाते हैं।

इस संरचनात्मक विसंगति को बाद में रॉबर्ट जर्विस (Robert Jervis) ने 1976 में प्रकाशित अपनी ऐतिहासिक पुस्तक '*Perception and Misperception in International Politics*' में मनोवैज्ञानिक और संज्ञानात्मक धरातल पर विस्तारित किया। जर्विस ने तर्क दिया कि सुरक्षा दुविधा केवल भौतिक हथियारों की होड़ नहीं है, बल्कि यह निर्णयकर्ताओं के 'गलत प्रत्यक्षीकरण' (Misperception) और अविश्वास का परिणाम है। जर्विस ने 'आक्रामक-रक्षात्मक विभेदीकरण' (Offensive-Defensive Differentiation) का सिद्धांत देते हुए स्पष्ट किया कि जब यह पहचानना असंभव हो जाता है कि किसी देश द्वारा विकसित की जा रही तकनीक या हथियार आक्रामक (हमला करने के लिए) हैं या विशुद्ध रूप से रक्षात्मक (बचाव के लिए), तो सुरक्षा दुविधा अपने चरम पर पहुँच जाती है। यह दुविधा स्पष्ट करती है कि अंतरराष्ट्रीय संबंधों में पूर्ण सुरक्षा की तर्कहीन खोज कैसे अंततः सामूहिक असुरक्षा को जन्म देती है।

2. 'अस्पष्ट प्रतीक' के रूप में राष्ट्रीय सुरक्षा (National Security as an Ambiguous Symbol)

सुरक्षा विमर्श के भीतर एक और महत्वपूर्ण दार्शनिक और राजनीतिक प्रहार अर्नोल्ड वोल्फर्स (Arnold Wolfers) ने किया। वर्ष 1952 में प्रकाशित अपने क्लासिक निबंध '*National Security as an Ambiguous Symbol*' में वोल्फर्स ने 'राष्ट्रीय सुरक्षा' शब्द की दार्शनिक और व्यावहारिक अस्पष्टता का एक अत्यंत तीखा और सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत किया। वोल्फर्स का मुख्य तर्क यह था कि 'राष्ट्रीय सुरक्षा' कोई वस्तुनिष्ठ या सर्वसम्मत अवधारणा नहीं है, बल्कि यह एक राजनीतिक रूप से निर्मित 'अस्पष्ट प्रतीक' है जिसका कोई निश्चित अर्थ नहीं है। जब कोई राजनेता या सरकार यह घोषणा करती है कि देश की "राष्ट्रीय सुरक्षा खतरे में है," तो इस अमूर्त नारे की आड़ में नीति-निर्माताओं को असीमित शक्तियाँ मिल जाती हैं।

वोल्फर्स ने रेखांकित किया कि इस शब्द की अस्पष्टता का उपयोग अक्सर घरेलू राजनीति में एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में किया जाता है। शासक वर्ग इस प्रतीक का लाभ उठाकर जनता के भीतर एक काल्पनिक या अतिरंजित (Exaggerated) भय का माहौल तैयार करता है, ताकि नागरिकों के मौलिक अधिकारों, व्यक्तिगत स्वतंत्रताओं और लोकतांत्रिक असहमति की आवाजों को आसानी से कुचला जा सके। सुरक्षा के नाम पर भारी-भरकम सैन्य बजट को सही ठहराया जाता है, जबकि लोक कल्याणकारी योजनाओं (स्वास्थ्य, शिक्षा) की अनदेखी कर दी जाती है। वोल्फर्स का यह विचार नीति-निर्माताओं को आगाह करता है कि राष्ट्रीय सुरक्षा की आड़ में कहीं राज्य स्वयं ही अपने नागरिकों की स्वतंत्रता के लिए सबसे बड़ा खतरा न बन जाए। इसलिए, सुरक्षा के नाम पर उठाए जाने वाले हर कदम का एक वस्तुनिष्ठ और पारदर्शी मूल्यांकन होना अनिवार्य है।

3. 'अविकसित अवधारणा' के रूप में सुरक्षा (Security as an Underdeveloped Concept)

शीत युद्ध के चरम दौर तक, अंतरराष्ट्रीय संबंधों के साहित्य में सुरक्षा को एक अत्यंत संकीर्ण और सीमित दृष्टिकोण से देखा जाता रहा। इसी बौद्धिक शून्यता को चुनौती देते हुए बैरी बुज़ान (Barry Buzan) ने 1983 में अपनी युगांतकारी पुस्तक '*People, States and Fear: An Agenda for International Security Studies in the Post-Cold War Era*' लिखी। बुज़ान ने एक अत्यंत कड़ा अकादमिक मूल्यांकन प्रस्तुत

करते हुए यह घोषणा की कि सुरक्षा अब तक अंतरराष्ट्रीय विमर्श में एक 'अविकसित अवधारणा' (Underdeveloped Concept) रही है। बुज़ान की मुख्य आलोचना यह थी कि पारंपरिक विचारकों ने सुरक्षा को केवल 'भय की अनुपस्थिति' (Absence of Fear) जैसी नकारात्मक और एक-आयामी परिभाषा में बांधकर रख दिया, जो पूरी तरह से सैन्य शक्ति और युद्ध के इर्द-गिर्द घूमती थी।

बुज़ान ने तर्क दिया कि सुरक्षा की वास्तविक दार्शनिक गहराई को समझने के लिए इसे केवल राज्य की सीमाओं के नजरिए से नहीं, बल्कि व्यक्तिगत, सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय स्तरों पर देखा जाना चाहिए। उन्होंने यह बुनियादी सवाल उठाया कि क्या सीमाओं की रक्षा मात्र से एक नागरिक सुरक्षित हो जाता है, यदि वह आंतरिक रूप से भुखमरी, सामाजिक उत्पीड़न या तानाशाही व्यवस्था का शिकार हो? बुज़ान की इस पुस्तक ने सुरक्षा को उसके संकीर्ण यथार्थवादी दायरे से बाहर निकाला और सुरक्षा अध्ययन (Security Studies) को एक व्यापक, बहु-क्षेत्रीय (Sectoral) और सकारात्मक ढांचा प्रदान किया। उन्होंने यह सिद्ध किया कि वास्तविक सुरक्षा केवल युद्धों को टालना नहीं है, बल्कि एक ऐसे सकारात्मक और न्यायपूर्ण सामाजिक-आर्थिक वातावरण का निर्माण करना है जहाँ व्यक्ति और समाज बिना किसी संरचनात्मक भय के फल-फूल सकें। बुज़ान के इसी दृष्टिकोण ने आगे चलकर 'मानव सुरक्षा' (Human Security) के आधुनिक प्रतिमानों का मार्ग प्रशस्त किया।

नए युग (2026-30) का समकालीन परिप्रेक्ष्य (Modern & Present-Era Extensions):

1. संज्ञानात्मक और डेटा संप्रभुता (Cognitive & Data Sovereignty)

इक्कीसवीं सदी के चौथे दशक में राष्ट्रीय सुरक्षा की रक्षात्मक रेखाएं भौगोलिक सीमाओं से पूरी तरह विस्थापित होकर मानव मस्तिष्क और अदृश्य डिजिटल सर्वरों के भीतर स्थानांतरित हो चुकी हैं। आज के इस नए युग में 'सूचना युद्ध' (Information Warfare) केवल सैन्य संचार को बाधित करने तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका मुख्य उद्देश्य कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), परिष्कृत एल्गोरिदम और डीपफेक (Deepfakes) तकनीकों के माध्यम से किसी संप्रभु राष्ट्र के नागरिकों के 'संज्ञानात्मक स्थान' (Cognitive Space) पर कब्ज़ा करना है। जब जनभावनाओं, राजनीतिक विमर्श और सामाजिक धारणाओं को बाहरी ताकतों द्वारा बिना किसी भौतिक हस्तक्षेप के रिमोटली नियंत्रित और हेरफेर किया जा सकता है, तो पारंपरिक संप्रभुता का पूरा ढांचा ही ध्वस्त हो जाता है।

इस संदर्भ में, प्रत्येक नागरिक का डेटा अब एक रणनीतिक परिसंपत्ति (Strategic Asset) बन चुका है। जो विदेशी राज्य या वैश्विक तकनीकी कंपनियाँ इस डेटा भंडार और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के बुनियादी ढांचे को नियंत्रित करती हैं, वे किसी भी देश की राजनीतिक स्थिरता को भीतर से खोखला करने की क्षमता रखती हैं। डीपफेक के माध्यम से फैलाए जाने वाले सुनियोजित भ्रम और जन-असंतोष किसी भी पारंपरिक सैन्य हमले की तुलना में कहीं अधिक तेजी से और कम लागत में आंतरिक गृहयुद्ध जैसी स्थितियाँ पैदा कर सकते हैं। इसलिए, वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में सुरक्षा का तात्पर्य केवल सीमाओं पर सैनिकों की तैनाती नहीं, बल्कि देश के सूचना तंत्र, एल्गोरिदमिक सुरक्षा और अपने नागरिकों की मानसिक तथा वैचारिक स्वतंत्रता को बाहरी हेरफेर से बचाना है, जिसे 'संज्ञानात्मक संप्रभुता' कहा जाता है।

2. हथियारबंद अंतर्निर्भरता (Weaponized Interdependence)

वैश्वीकरण के शुरुआती दौर में यह तर्क दिया जाता था कि राष्ट्रों के बीच बढ़ती आर्थिक और व्यापारिक निर्भरता युद्ध की संभावनाओं को समाप्त कर देगी और एक सुरक्षित दुनिया का निर्माण करेगी। परंतु, समकालीन भू-राजनीति ने इस उदारवादी धारणा को पूरी तरह से उलट दिया है। हेनरी फैरेल (Henry Farrell) और अब्राहम न्यूमैन (Abraham Newman) जैसे विचारकों द्वारा प्रतिपादित 'हथियारबंद अंतर्निर्भरता' (Weaponized Interdependence) का सिद्धांत यह स्पष्ट करता है कि वैश्विक नेटवर्क और आपूर्ति श्रृंखलाएं (Supply Chains) तटस्थ नहीं होतीं। बल्कि, जो देश इन नेटवर्कों के मुख्य केंद्रों या नोड्स (Hubs) को नियंत्रित करते हैं, वे अपनी इस केंद्रीय स्थिति का उपयोग अन्य निर्भर देशों को दबाने और अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा के हितों को साधने के लिए एक खतरनाक भू-राजनीतिक हथियार की तरह करते हैं।

आज के दौर में सेमीकंडक्टर चिप्स, लिथियम, कोबाल्ट जैसे दुर्लभ पृथ्वी तत्वों (Rare Earth Elements) और वैश्विक वित्तीय प्रणालियों (जैसे स्विफ्ट नेटवर्क) पर किसी एक या कुछ चुनिंदा देशों का एकाधिकार होना इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। उदाहरण के लिए, यदि कोई राष्ट्र आधुनिक युद्धक विमानों, मिसाइल प्रणालियों या घरेलू तकनीकी उपकरणों के लिए आवश्यक उन्नत सेमीकंडक्टर चिप्स के लिए किसी प्रतिद्वंद्वी देश पर निर्भर है, तो संकट के समय उस आपूर्ति श्रृंखला को रोककर पूरे देश की रक्षा व्यवस्था को बिना एक भी गोली चलाए अंपंग किया जा सकता है। यह नई वास्तविकता यह सिद्ध करती है कि पूर्ण आर्थिक आत्मनिर्भरता और वैकल्पिक आपूर्ति श्रृंखलाओं का निर्माण किए बिना कोई भी राष्ट्र रणनीतिक रूप से कभी भी सुरक्षित नहीं हो सकता।

3. मानव और पारिस्थितिक सुरक्षा (Human and Ecological Security)

समकालीन युग की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि राष्ट्र जिन खतरों से निपटने के लिए खरबों डॉलर का सैन्य बजट खर्च कर रहे हैं, वे खतरे अब उन बंदूकों और मिसाइलों की जद से पूरी तरह बाहर हैं। जलवायु परिवर्तन, तेजी से गहराता जल संकट, नई संक्रामक महामारियाँ और इनके परिणामस्वरूप होने वाला बड़े पैमाने पर विस्थापन (Climate Migration) आज किसी भी विदेशी सेना या परमाणु हथियारों के जखीरे से कहीं अधिक वास्तविक और विनाशकारी खतरा बन चुके हैं। प्रकृति का यह बदलता रूप सुरक्षा अध्ययन के क्षेत्र में 'थ्रेट मल्टीप्लायर' (Threat Multiplier) यानी खतरों को कई गुना बढ़ाने वाले कारक के रूप में उभरा है।

ग्लोबल वार्मिंग के कारण पिघलते ग्लेशियर और नदियों का सूखना न केवल कृषि व्यवस्था को तबाह कर रहा है, बल्कि दो या दो से अधिक परमाणु-संपन्न देशों के बीच जल-युद्ध (Water Wars) की पृष्ठभूमि भी तैयार कर रहा है। इसके साथ ही, बार-बार आने वाली प्राकृतिक आपदाओं और समुद्र के बढ़ते जलस्तर के कारण करोड़ों लोग अपने घरों को छोड़ने पर मजबूर हो रहे हैं। यह अनियंत्रित विस्थापन सीमाओं पर तीव्र सामाजिक तनाव, जनसांख्यिकीय असंतुलन और आंतरिक अशांति को जन्म दे रहा है, जिससे निपटने में पारंपरिक सेनाएं पूरी तरह अक्षम हैं। इसी प्रकार, वैश्विक महामारियों ने यह साबित कर दिया है कि एक अदृश्य वायरस किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था, सुरक्षा व्यवस्था और सामाजिक ताने-बाने को जितनी

तेजी से पंगु बना सकता है, उतनी तेजी से कोई दुश्मन सेना भी नहीं कर सकती। अतः, जब तक पारिस्थितिक संतुलन और मानव स्वास्थ्य को सुरक्षा विमर्श के केंद्र में नहीं रखा जाएगा, तब तक राष्ट्रीय सुरक्षा की हर परिभाषा अधूरी और खोखली रहेगी।

प्रस्तावित प्रतिमान और निष्कर्ष (Proposed Strategic Model & Conclusion)

• त्रि-आयामी सुरक्षा मॉडल (Proposed 3D Security Model)

इस शोध पत्र में ऐतिहासिक और समकालीन सुरक्षा बहसों के विस्तृत विश्लेषण के उपरांत, वर्तमान युग की जटिलताओं से निपटने के लिए एक नवीन 'त्रि-आयामी व्यापक सुरक्षा मॉडल' (3D Comprehensive Security Model) प्रस्तावित किया गया है। यह मॉडल पारंपरिक सैन्य रक्षा प्रणालियों से आगे बढ़कर राज्य को एक बहुआयामी और लचीला सुरक्षा कवच प्रदान करता है। **इस मॉडल के**

तीन मुख्य स्तंभ निम्नलिखित हैं:

क) हाइब्रिड लचीलापन (Hybrid Resilience)

यह स्तंभ इस सिद्धांत पर आधारित है कि आधुनिक युद्ध केवल अग्रिम मोर्चों पर नहीं, बल्कि समाज के भीतर 'ग्रे-ज़ोन' (Grey-Zone) में लड़े जा रहे हैं। हाइब्रिड लचीलेपन का तात्पर्य राज्य, निजी क्षेत्र और नागरिक समाज के बीच एक एकीकृत रक्षा तंत्र का निर्माण करना है। इसके अंतर्गत, राष्ट्र को केवल सैन्य रूप से मजबूत नहीं होना है, बल्कि उसके सामाजिक-आर्थिक ताने-बाने को इतना लचीला (Resilient) बनाना है कि वह किसी भी अप्रत्याशित संकट—जैसे अचानक साइबर हमला, विदेशी दुष्टाचार अभियान या वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला में व्यवधान—को झेल सके और न्यूनतम समय में पुनः अपनी सामान्य स्थिति में लौट सके। यह मॉडल पूरी शासन प्रणाली के एकीकरण (Whole-of-Government Approach) पर बल देता है।

ख) डेटा-केंद्रित रक्षा (Data-Centric Defense)

चूंकि वर्तमान डिजिटल शीत युद्ध में डेटा ही नया रणनीतिक हथियार है, इसलिए यह मॉडल सुरक्षा व्यवस्था को 'प्रतिक्रियात्मक' (Reactive) से बदलकर 'पूर्वानुमानित' (Predictive) बनाने पर जोर देता है। इसके तहत, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), बिग डेटा एनालिटिक्स और क्वांटम कंप्यूटिंग का उपयोग राष्ट्रीय रक्षा के प्राथमिक उपकरणों के रूप में किया जाना चाहिए। राष्ट्रीय डेटा संप्रभुता को अक्षुण्ण रखने के लिए क्रिटिकल इंफ्रास्ट्रक्चर की चौबीसों घंटे निगरानी, एल्गोरिथमिक खतरों की अग्रिम पहचान और नागरिकों के संज्ञानात्मक स्थान (Cognitive Space) को बाहरी हेरफेर से सुरक्षित रखना इस स्तंभ का मूल उद्देश्य है।

ग) सहयोगात्मक बहुपक्षवाद (Collaborative Multilateralism)

तीसरा और अंतिम आयाम यह स्वीकार करता है कि जलवायु परिवर्तन, वैश्विक महामारियां और सीमाविहीन साइबर अपराध ऐसे खतरे हैं जिनसे कोई भी राष्ट्र, चाहे वह कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो, अकेले नहीं निपट सकता। यह स्तंभ एकांतवाद (Isolationism) को खारिज करते हुए रणनीतिक रूप से लचीले, मुद्दे-आधारित और त्वरित अंतरराष्ट्रीय गठबंधनों (Agile Coalitions) के निर्माण का समर्थन करता है। इसके माध्यम से वास्तविक समय में खुफिया

जानकारी का आदान-प्रदान, तकनीकी मानकों का संयुक्त निर्धारण और वैश्विक पारिस्थितिक संकटों पर सामूहिक प्रतिक्रिया सुनिश्चित की जा सकती है, जो आदर्शवाद और यथार्थवाद का एक व्यावहारिक समन्वय है।

निष्कर्ष (CONCLUSION)

सैद्धांतिक और व्यावहारिक धरातल पर किए गए इस गहन शोध का अंतिम संकलन यह सिद्ध करता है कि 1648 के वेस्टफेलियन मॉडल से चली आ रही 'राष्ट्र' और 'राष्ट्रीय सुरक्षा' की पारंपरिक परिभाषाएं अब इतिहास के पन्नों तक सीमित हो चुकी हैं। Hans J. Morgenthau का यथार्थवादी शक्ति संघर्ष और वुड्रो विल्सन का आदर्शवादी संस्थागत ढांचा अपनी शास्त्रीय प्रासंगिकता बनाए रखने के बावजूद, 21वीं सदी के डिजिटल और पारिस्थितिक संकटों का पूर्ण समाधान खोजने में अपूर्ण साबित हुए हैं। अर्नोल्ड वोल्फर्स ने सुरक्षा को जिस प्रकार एक 'अस्पष्ट प्रतीक' और बैरी बुज़ान ने इसे एक 'अविकसित अवधारणा' के रूप में चिह्नित किया था, वह विसंगति आज के इस 'हथियारबंद अंतर्निर्भरता' (Weaponized Interdependence) वाले युग में और अधिक गहरी हो गई है।

भविष्य की सुरक्षा नीतियों के लिए निर्णायक मार्ग निर्देश यह है कि अब सुरक्षा को केवल सीमाओं पर तैनात सैनिकों या हथियारों की संख्या से नहीं मापा जा सकता। वास्तविक सुरक्षा देश के तकनीकी बुनियादी ढांचे की मजबूती, आपूर्ति श्रृंखलाओं की आत्मनिर्भरता, नागरिकों की मानसिक व वैचारिक स्वतंत्रता (संज्ञानात्मक संप्रभुता) और पर्यावरणीय स्थिरता में निहित है। जो राष्ट्र पारंपरिक संकीर्ण मानसिकता से बाहर निकलकर इस त्रि-आयामी मॉडल (3D Model) को अपनी राष्ट्रीय रक्षा रणनीति का हिस्सा बनाएंगे, वे ही आने वाले समय में न केवल अपनी संप्रभुता की रक्षा कर सकेंगे, बल्कि एक नई और सुरक्षित वैश्विक व्यवस्था का नेतृत्व भी करेंगे। यह शोध पत्र नीति-निर्माताओं को अपनी सैन्य और गैर-सैन्य क्षमताओं के बीच एक न्यायपूर्ण संतुलन बनाने और राष्ट्रीय सुरक्षा के विमर्श को मानवीय, तकनीकी तथा बहुआयामी दृष्टिकोण देने का आह्वान करता है।

संदर्भ सूची (REFERENCES)

1. Buzan B. People, states and fear: an agenda for international security studies in the post-Cold War era. 2nd ed. ECPR Press; 1991. p. 112-145.
2. Carr EH. The twenty years' crisis, 1919-1939: an introduction to the study of international relations. Macmillan & Co.; 1939. p. 67-89.
3. Clausewitz C von. On war. Howard M, Paret P, editors and translators. Princeton University Press; 1976. p. 87-110. Originally published 1832.
4. Condorcet M de. Sketch for a historical picture of the progress of the human mind. Barraclough J, translator. Weidenfeld & Nicolson; 1955. p. 142-160. Originally published 1795.
5. Farrell H, Newman AL. Weaponized interdependence: how global economic networks shape state coercion. Princeton University Press; 2019. p. 19-54.
6. Kautilya. The Arthashastra. Rangarajan LN, editor and translator. Penguin Books India; 1992. p. 521-545.

7. Keohane RO. After hegemony: cooperation and discord in the world political economy. Princeton University Press; 1984. p. 135-160.
8. Lippmann W. US foreign policy: shield of the republic. Little, Brown and Company; 1943. p. 49-72.
9. Machiavelli N. The prince. Price R, editor. Cambridge University Press; 2003. p. 62-85. Originally published 1532.
10. Morgenthau HJ. Politics among nations: the struggle for power and peace. Alfred A Knopf; 1948. p. 3-25.
11. Nye JS. The future of power. PublicAffairs; 2011. p. 81-114.
12. Wright Q. A study of war. Vol. 2. University of Chicago Press; 1942. p. 1210-1235.
13. Journal articles
14. Herz JH. Idealist internationalism and the security dilemma. World Politics. 1950;2(2):157-180.
15. Jervis R. Cooperation under the security dilemma. World Politics. 1978;30(2):167-214.
16. Kennan GF. The sources of Soviet conduct. Foreign Affairs. 1947;25(4):566-582. Published under the pseudonym X.
17. Kaldor M. In defense of new wars. Stability: International Journal of Security and Development. 2013;2(1): Art 4:1-16.
18. Wolfers A. "National security" as an ambiguous symbol. Political Science Quarterly. 1952;67(4):481-502.
19. Global newspaper publications
20. Gartner M, Sanger DE. Cognitive warfare: how AI algorithms and deepfakes are rewriting digital sovereignty. The New York Times. 2025 Nov 14. p. A12-A13.
21. Rachman G. The Silicon Shield: weaponized supply chains and the new geopolitics of semiconductors. Financial Times. 2024 May 8. p. 15.
22. Wolf M. Beyond borders: why climate migration and water scarcity outpace traditional military budgets. Financial Times. 2026 Feb 21. p. 19.

Creative Commons (CC) License

This article is an open-access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution–Non-Commercial–No Derivatives 4.0 International (CC BY-NC-ND 4.0) license. This license permits sharing and redistribution of the article in any medium or format for non-commercial purposes only, provided that appropriate credit is given to the original author(s) and source. No modifications, adaptations, or derivative works are permitted under this license.